ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-5* Issue-10* November- 2020
Innovation The Research Concept

भारतीय दर्शन में 'अनुमान–विचार'

Concept of 'Inference' in Indian Philosophy

Paper Submission: 15/11/2020, Date of Acceptance: 26/11/2020, Date of Publication: 27/11/2020

ललन कुमार
अतिथि व्याख्याता,
दर्शन शास्त्र विभाग,
राजेन्द्र मिश्र महाविद्यालय,
सहरसा, बिहार, भारत

सारांश

भारतीय दर्शन में अनुमान दूसरा सबसे महत्वपूर्ण प्रमाण है।चार्वाकको यदि छोड़ दें तो भारतीय दर्शन की प्रत्येक शाखा ने अनुमान को एक स्वतंत्र प्रमाण के रूप में स्वीकार किया है। अनुमान का शाब्दिक अर्थ होता है –बादका ज्ञान। यह ज्ञान प्रत्यक्ष के बाद होता है। यह महत्वपूर्ण इसलिए भी है क्योंकि जो ज्ञान प्रत्यक्ष के द्वारा प्राप्त नहीं कर सकते, अनुमान के द्वारा प्राप्त कर लेते हैं। प्रमाणमीमांसा में अनुमान के विभिन्न अंगों, अनुमान का आधार व्याप्ति तथा इसके प्रकारों का वर्णन हुआ है।

Inference is the second most important evidence in Indian philosophy. If left out of Charvakas, every branch of Indian philosophy has accepted the presumption as an independent proof. Estimation literally means - knowledge of the latter. This knowledge is followed by direct. This is also important because those who cannot acquire knowledge through direct, acquire by inference. The various parts of inference, the basis of inference and its types have been described in Pramanimamsa.

मुख्य शब्द : आत्मा, प्रकृति, तात्विक प्रश्न, द्वैतवादी दर्शन ।

Spirit, Nature, Elemental Questions, Dualistic Philosophy.

प्रस्तावना

भारतवर्ष में दर्शन का इतिहास ऋगवेद से मिलना प्रारम्भ होता है। दर्शन की एक महत्वपूर्ण शाखा ज्ञान–मीमांसा पूर्णरूपेण प्रमाणों पर आधारित है। भारतीय दर्शन में विभिन्न प्रमाणों को स्वीकार किया गया यथा प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापति, अनुपलब्धि आदि–आदि। प्रत्यक्ष के बाद सबसे महत्वपूर्ण ज्ञान का साधन अनुमान को माना जाता है।

अनुमान शब्द दो शब्दों अनु+मान से मिलकर बना है। 'अनु' का अर्थ पश्चात् और 'मान' का अर्थ ज्ञान होता है। अनुमान का अर्थ है वह ज्ञान जो एक ज्ञान के बाद आये। अनुमान प्रत्यक्ष पर आधारित ज्ञान है। अनुमान वह ज्ञान है जिसमे प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर जाया जाता है। विभिन्न दर्शनों में अनुमान की विवेचना की गई है।

अध्ययन का उद्देश्य

अनुमान ज्ञान प्राप्ति का एक महत्वपूर्ण साधन है। प्रत्यक्ष और तर्क के द्वारा अप्रत्यक्ष की सिद्धि अनुमान प्रमाण का उद्देश्य है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भारतीय दर्शन में अनुमान संबंधी विभिन्न विचारों को एकत्र कर प्रस्तुत किया गया है। अनुमान के द्वारा निश्चित ज्ञान की प्राप्ति ही हमारा उद्देश्य है।

विषय विस्तार

चार्वक दर्शन अनुमान को प्रमाण के रूप में स्वीकार नही करता है। उनका कहना है कि अनुमान को हम प्रमाण तभी मान सकते है जब इसके द्वारा प्राप्त ज्ञान संशय–रहित तथा वास्तविक हो ऐसा ज्ञान केवल प्रत्यक्ष से ही संभव है। किंतु अनुमान में इन बातों का सर्वथा अभाव है।

चार्वाक का कहना है कि अनुमान तभी युक्तिपूर्ण तथा निश्चयात्मक हो सकता है जब व्याप्ति–वाक्य सर्वथा निःसंदेह हो क्योंकि व्याप्ति–वाक्य मे ही लिंग का साध्य के साथ पूर्ण व्यापक संबंध स्थापित रहता है। धूमवान पर्वत को निश्चयात्मक रूप से वहिमान तभी मान सकते हैं जब धूमवान पदार्थ वास्तव मे वहिमानहो। सभी धूमवान पदार्थ वहिमान है। ऐसा हम तभी सिद्व कर सकते हैं जब सभी धूमवान पदार्थो को और उनके साथ वहि के संबंध को भी देख सके। किंतु यह सर्वथा असंभव है। भूत तथा भविष्य की बात ही क्या, वर्तमान समय मे भी संसार के भिन्न–भिन्न भागों में जो धूमवान पदार्थ है, उन्हे भी हम नही देख सकतें। अतः यह स्पष्ट है कि हम प्रत्यक्ष के द्वारा व्याप्ति की स्थापना नहीं कर सकते। क्योंकि जिस अनुमान के द्वारा हम इसकी स्थापना करेंगे उसकी सत्यता

भी व्याप्ति पर ही निर्भर करती है। इस तरह यहाँ अन्योन्याश्रय दोष हो जाता है। व्याप्ति की स्थापना हम शब्द के द्वारा भी नही कर सकते है। क्योंकि शाब्दिक प्रमाण की सिद्वि भी अनुमान के द्वारा ही होती है। [1]

चार्वाक कार्य–कारण संबध को भी व्याप्ति पर ही आश्रित मानते है। उनका कहना है कि एक व्याप्ति को सिद्व करने के लिए दूसरा व्याप्ति की जरूरत है जिससे पुनरावृति–दोष उत्पन्न होता है।

चार्वाक का यह भी कहना है कि अनुमान के द्वारा सर्वथा सत्य ज्ञान की प्राप्ति असंभव है। जब हम व्यावहारिक जीवन में अपने विभिन्न अनुमानों का मूल्यांकन करते है, तो हम पाते है कि अनेक अनुमान गलत हो जाते है। अतः निश्चित ज्ञान देना अनुमान का आवश्यक गुण नहीं कहा जा सकता। अनुमान में सत्य और असत्य दोनों की सम्भावना रहती है। ऐसी दशा में अनुमान को यथार्थ ज्ञान का साधन नही कहा जा सकता है। [2] जैन दार्शनिक अनुमान को मानस ज्ञान की कोटि में रखते है। यह ज्ञान परोक्ष तथा अपने विषय मे अविसंवादि है और संशय, विपर्य, अनध्यवसाय आदि का निराकरण करने के कारण प्रमाण है।

उपलब्ध जैन ग्रंथो मे अनुमान का स्पष्ट लक्षण न्यायावतार मे मिलता है। न्यायवतार के अनुसार साध्य के अभाव में न होने वाले अविनाभावीय लिंग द्वारा साध्य का जो निश्चयात्मक ज्ञान होता है वह अनुमान है। अकलंक ने न्यायविनिश्चय मे कहा है कि साधन से साध्य के ज्ञान को अनुमान कहते है। साधन का अर्थ है हेतु अथवा लिंगसाधन को देखकर साध्य का नियत ज्ञान अविनाभाव के रूप मे प्राप्त करना अनुमान है । अनुमान के लिए साधन और साध्य के बीच अविनाभाव संबंध नितांत अनिवार्य है। सर्वप्रथम साधन को देखकर पूर्वगृहीत अविनाभाव का स्मरण होता है, फिर जिस साधन से साध्य की व्याप्ति को ग्रहण किया गया है उस साधन के साथ वर्तमान साधन का सादृश्यप्रत्यभिज्ञान किया जाता है। तब साध्य का अनुमान होता है।[3]

बौद्धदार्शनिक मात्र दो ही प्रमाण को स्वीकार करते है–प्रत्यक्ष और अनुमान।बौद्धमतानुसार प्रत्यक्ष की विषय–वस्तु स्वलक्षण है जो सर्वथा निर्विशेष है। अनुमान की विषय–वस्तु संवृति है, जो सामान्य है। इस प्रकार बौद्धमतानुसार अनुमान की उपयोगिता परमार्थ या यथार्थ सता के ज्ञान के प्रति शून्य है। यह मात्र संवृति या सता के आभासिक रूप का ज्ञान दे सकने में सक्षम है। बौद्धआचार्य दिग्नाग के अनुसार अनुमान दो प्रकार के है– स्वार्थानुमान और परार्थानुमान। स्वार्थानुमान और परार्थानुमान परस्पर सर्वथा भिन्न है। धर्मकीर्ति के अनुसार स्वार्थानुमान और परार्थानुमान का भेद इतना प्रबल है कि अनुमान की कोई भी ऐसी सामान्य परिभाषा संभव नही जिसमें स्वार्थानुमान और परार्थानुमान दोनों साथ–साथ समाहित हो सकें। धर्मकीर्ति के अनुसार स्वार्थानुमान एक आन्तरिक प्रक्रिया है जो स्वयं ज्ञाता के अन्तर्मन में स्वयं के विषय बोध के लिए सम्पन्न होती है, दूसरी ओर परार्थानुमान शब्दबद्धहोता है क्योंकि परार्थानुमान से प्राप्त ज्ञान दूसरों को विषय का बोध कराया जाता है। इस बोध के लिए अभिव्यक्ति की आवश्यकता है जो अभिव्यक्ति शब्द के अभाव में संभव नही, अतः परार्थानुमान शब्दमूलक है। [4]

न्याय दर्शन मे अनुमान की विशद्चर्चा की गई है। अनुमान प्रमाण के विधिवत वैज्ञानिक विवेचन का श्रेय अधिकांश विद्वान न्याय दर्शन के प्रणेता महर्षि गौतम को देते है जिन्होनें सर्वप्रथम 'न्याय सूत्र' लिखकर प्रमाण रूप में अनुमान की वैज्ञानिक प्रतिस्ठा की ।

न्याय सूत्र मे अनुमान को 'तत्पूर्वकम' कहा गया है। एक ज्ञान के बाद और उसके कारण उत्पन्न होनेवाला दूसरा ज्ञान अनुमान है जैसे धुँआ द्वारा आग का ज्ञान। किसी हेतु या लिंग के ज्ञान से उस लिंग को धारण करनेवाले लिंगी का ज्ञान अनुमान है। यह परोक्ष ज्ञान है जो हेतु से उत्पन्न होता है हेतु का साध्य के साथ नियत सम्बन्ध है। हेतु की पक्ष मे स्थिति को पक्ष–धर्मता कहा जाता है। हेतु को लिंग साधन या व्याप्य कहते है। साध्य को व्यापक भी कहते है। जिस वस्तु को सिद्व करना उसे साध्य कहते हैं ।जिसके द्वारासिद्ध करना है उसे हेतु कहते हैं। जिसमें सिद्ध करना है उसे पक्ष कहते है। अनुमान का प्राण व्याप्ति है। हेतु और साहय के व्यापक दो शब्दो से मिलकर बना है– वि+आप्ति। व्याप्ति का शाब्दिक अर्थ है–विशेष प्रकार से सम्बन्ध। व्याप्ति को विशेष प्रकार का सम्बन्ध कहा गया है क्योंकि यह कभी टूटता नही है। व्याप्ति को इस प्रकार अनिवार्य सम्बध कहा जाता है। उदाहरण के लिए धुँआ और आग में व्याप्ति सम्बन्ध है।[5]

व्याप्ति न्याय शास्त्र का सर्वाधिक महत्वपूर्ण विषय हैं। साधारणतः नैयायिक यह स्वीकार करते है कि व्याप्ति हेतु का साध्य के साथ स्वाभाविक उपाधिरहित संबंध है। यथा धूम्र का अग्नि के साथ जो संबंध है वह स्वाभाविक है, साथ ही यह संबंध उपाधिरहित भी है क्योंकि धूम्र जहॉ भी रहेगा अग्नि वहॉ रहेगी। अग्नि के अभाव मे धूम्र उत्पति या उपस्थिति संभव नही है। इसलिए धूम्र और अग्नि में व्याप्ति का संबंध है। इस संबंध के कारण ही धूम्र अग्नि का लिंग, हेतु या चिन्ह कहा जाता गया है। दूसरी तरफ अग्नि को धूम्र का हेतु या लिंग या चिन्ह नहीं क्योंकि अग्नि की उपस्थिति से धूम्र की उपस्थिति सिद्व नही होती,या धूम्र के आभाव में भी अग्नि संभव होती है। यथा तप्त लोहे मे अग्नि उपस्थित होने पर भी वहॉ धूम्र उपस्थित नहीं होता। अग्नि के साथ धूम्र का रहना किसी अन्य उपाधी यथा ईधन के भीगेपन पर निर्भर करता है। अतः जहॉ–जहॉ धुऑ है, वहॉ–वहॉ आग है तो व्याप्ति है लेकिन जहाँ–जहाँ आग है वहाँ–वहाँ धुआँ है, व्याप्ति नहीं, क्योंकि इनमें से पहला वाक्य निरूपाधिक है, लेकिन दूसरा वाक्य निरूपाधिक नहीं है।[6]

न्याय दर्शन मे अनुमान का वर्गीकरण विभिन्न आधारों पर किया गया है। प्रयोजन की दृष्टि से अनुमान के दो भेद किये गये है–(1)स्वार्थानुमान (2) परार्थानुमान। स्वार्थानुमान में पल्चावयव–वाक्य की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह अनुमान अपने लिये ही है तथा यह एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। परार्थानुमान दूसरों को समझाने के लिये है, अतः उसमें पंचावयव वाक्य आवश्यक है। परार्थानुमान पंचावयव वाक्य द्वारा प्रकट किया जाता है। अनुमान में पॉच वाक्य होते हैं जिन्हें प्रतिज्ञा हेतु,

उदाहरण, उपनय और निगमन कहते है। प्रतिज्ञावाक्य में पक्ष मे साध्य अर्थात सिद्ध की जानेवाली वस्तु का निर्देश होता है। हेतु वाक्य मे अनुमान को सिद्ध करने वाले कारण का या साधन का निर्देश होता है। उदाहरण वाक्य मे हेतु और साध्य के व्याप्तिसम्बन्ध का अर्थात उनके नियतसाहचर्यनियम का उदाहरण सहित उल्लेख होता है। उपनय वाक्य में व्याप्ति–विशिष्ट पक्षधर्मता का ज्ञान होता ह। पञ्चम वाक्य निगमन या निष्कर्ष है।[7] जिसमें प्रतिज्ञा की सिद्धि होती है इस पञ्चावयव वाक्य का प्रयोग इस प्रकार किया जाता है–

पहाड़ मे आग है। (प्रतिज्ञा)

क्योंकि वहां धुआँ है। (हेतु)

जहाँ–जहाँ धुआँ रहता है, वहाँ–वहाँ आग होती है जैसे रसोईघर में। (उदाहरण)

पहाड़ मे धुआँ है। (उपनय)

इसलिए पहाड़ मे आग है। (निगमन) गौतम मुनी ने न्यायसूत्र मे तीन प्रकार के अनुमान का उल्लेख किया है– पूर्ववत, शेषवत और सामान्यतोदृष्ट। भास्यकार वात्स्यायन के अनुसार पूर्ववत अनुमान मे दृष्ट कारण से अदृष्ट कार्य का अनुमान किया जाता है, जैसे आकाश मे छाये गहरे काले मेघों को देखकर उनके कारण निकट भविष्य मे होने वाही वर्षा का अनुमान करना और शेषवत अनुमान मे दृस्ट कार्य से अदृष्ट कारण का अनुमान किया जाता है , जैसे नदी के मटमैले बाढ़ के पानी को देखकर उसके कारण अतीत मे हुई वर्षा का अनुमान करना। यदि दो वस्तुओं को साथ–साथ देखें तब एक को देखकर दूसरे का अनुमान करना सामान्यतोदृष्ट है। जैसे किसी पशु के सींगो के आधार पर उसके फटे हुये खुरों का अनुमान करना सामान्यतोदृष्ट है।[8]

सांख्य दर्शन तीन प्रमाण मानता है। ये है प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द। सांख्य का दूसरा प्रमाण अनुमान है। अनुमान के विषय मे न्याय दर्शन के द्वारा कही गई बातों को सांख्य दर्शन आंशिक परिवर्तन करते हुए स्वीकार कर लेता है। अनुमान दो प्रकार के होते है– वीत और अवीत। वीत अनुमान उसे कहते हैं जो पूर्णव्यापी भावात्मक वाक्य पर अवलम्बित रहता है। वीत अनुमान के दो भेद माने गये है– (1) पूर्ववत और (2) सामान्यतोदृष्ट। पूर्ववत अनुमान उसे कहा जाता है जो दो वस्तुओं के बीच व्याप्ति सम्बन्ध पर आधारित है। धुआँ और आग दो ऐसी वस्तुएँ है जिनके बीच व्याप्ति सम्बन्ध निहित है। इसलिए धुआँ को देखकर आग का अनुमान किया जाता है। इस अनुमान का आधार है जहाँ–जहाँ धुआँ है वहाँ–वहाँ आग है। वह अनुमान जो हेतु और साहय के बीच व्याप्ति–सम्बन्ध पर निर्भर नहीं करता है सामान्यतोदृष्ट अनुमान कहा जाता है। यह अनुमान हेतु का उन वस्तुओं के साथ सादृश्य रहने के फलस्वरूप जिनका साहय के साथ नियत सम्बन्ध है सम्भव होता है। इसका उदाहरण इन्द्रियों का ज्ञान है। इन्द्रियों का ज्ञान प्रत्यक्ष से संभव नही है। परन्तु इन्द्रियों के अस्तिव का ज्ञान अनुमान से होता क्योंकि वह क्रिया है और प्रत्येक क्रिया के लिए साधन की आवश्यकता महसूस होती है। वे साधन इन्द्रियों है।

दूसरे प्रकार के अनुमान को 'अवीत' कहा जाता है। अवीत उस अनुमान को कहा जाता है जो कि पूर्णव्यापी निषेधात्मक वाक्य पर आधारित रहता है। उदाहरणस्वरूप शब्द को एक गुण माना जाता है क्योंकि उसमे द्रव्य, कर्म, सामान्य विशेष, समवाय और अभाव के लक्षण नही दीख पड़ता है। सात पदार्थों मे से छः पर्दाथ छट जाते है। शेष पदार्थ गुण बच जाता है जिससे निष्कर्ष निकलता है कि शब्द एक गुण है। सांख्य दर्शन में भी पंचाबयव अनुमान को प्रधानता दी गई है।[9]

मीमांसा न्याय–दर्शन के अनुमान विचार को अधिकांश बातो को स्वीकार करता है। दोनों मे सूक्ष्म अन्तर यह है कि जहाँ नैयायिक अनुमान के लिये पाँच वाक्यों को आवश्यक मानते है, वहाँ मीमांसा प्रथम तीन या अंतिम तीन वाक्य को ही अनुमान के लिए पर्याप्त मानते हैं।

वेदान्त ग्रंथो में वेदान्त परिभाषा और उसके उपर लिखी गई टीकाओं में अनुमान विषयक विवेचन पाये जाते हैं। यद्यपि वेदान्त परिभाषाकार अपनी अनुमान संबंधी गवेषणा नैयायिकों की गवेषणा पर ही अधारित करते है तथापि इन गवेषणाओं में यत्र–तत्र सूक्ष्म मतभेद दिख जाते है। वेदान्त परिभाषा क अनुसार अनुमिति–ज्ञान के कारण को अनुमान कहते है।[10]

निष्कर्ष

भारतीय दर्शन के अनुमान विचार पर दृष्टिपात करने से यह स्पष्ट होता है कि अनुमान अत्यन्त ही महत्वपूर्ण प्रमाण है। हमारे दैनिक जीवन में हर दिन इसकी आवश्यकता पड़ती है। अनुमान के बिना ज्ञान का क्षेत्र सीमित हो जाता है। अनुमान ही वह प्रमाण है जो हमें प्रत्यक्ष के परे का ज्ञान प्रदान करता है। इसके महत्व को हम नकार नहीं सकते। जो ज्ञान प्रत्यक्ष से प्राप्त नहीं कर पाते उसका भी ज्ञान हमें अनुमान के द्वारा होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *भारतीय दर्शन की रूपरेखा, प्रो. हरेंद्र प्रसाद सिन्हा, पृष्ठ संख्या –82*
2. *वही, पृष्ठ संख्या –83*
3. *भारतीय ज्ञान मीमांसा , नीलिमा सिन्हा, पृष्ठ संख्या –132*
4. *वही, पृष्ठ संख्या– 130*
5. *भारतीय दर्शन, चंद्रधर शर्मा ,पृष्ठ संख्या– 180*
6. *भारतीय ज्ञान मीमांसा ,नीलिमा सिन्हा पृष्ठ संख्या –139*
7. *भारतीय दर्शन ,चंद्रधर शर्मा , पृष्ठसंख्या –171*
8. *वही पृष्ठ संख्या–183*
9. *भारतीय दर्शन की रूपरेखा ,प्रो. हरेंद्रप्रसाद सिन्हा , पृष्ठ संख्या –265*
10. *भारतीय ज्ञान मीमांसा, नीलिमा सिन्हा, पृष्ठ संख्या– 130*